# हिंदी अनुशीलन

( पीयर रिव्यूड व यूजीसी केयर लिस्टेड जर्नल )

वर्ष 63 जनवरी-मार्च तथा अप्रैल-जून 2021 अंक 1-2 ISSN : 2249-930X

परामर्शदाता
प्रो. कमल किशोर गोयनका
प्रो. सुरेन्द्र दुबे
प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित

प्रधान संपादक
प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय

संपादक
प्रो. नरेन्द्र मिश्र

संपादन सहयोग
डॉ. निर्मला अग्रवाल
प्रो. मीरा दीक्षित

भारतीय हिंदी परिषद्, प्रयाग

हिंदी अनुशीलन

( पीयर रिव्यूड व यूजीसी केयर लिस्टेड जर्नल )

ISSN : 2249-930X

प्रकाशक : डॉ. निर्मला अग्रवाल, प्रबंधमंत्री, भारतीय हिंदी परिषद्
हिंदी-विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
Website : www.bhartiyahindiparishad.com
Email : hindianusheelan@gmail.com

मूल्य : ₹ 100.00

अक्षर संयोजन : राजेश शर्मा, मो. : 9450252918
मुद्रक : प्रभा कम्प्यूटर्स एण्ड प्रिंटर्स, विश्वविद्यालय मार्ग, प्रयागराज

# अनुक्रम


1. विमर्श — 1
   *प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय*
2. संवाद — 6
   *प्रो. नरेन्द्र मिश्र*
3. संत काव्य में प्रतिरोधी स्वर — 22
   *प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित*
4. दादू पंथ के शिखर संत और उनकी रहस्य साधना — 28
   *प्रो. राधेश्याम दूबे*
5. दादू पंथी संत कवियों का लोक जागरण और मानव मूल्य — 45
   *डॉ. भरत सिंह*
6. दादू का विरह — 54
   *प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल*
7. संतकाव्य परम्परा में संत शिरोमणी दादूदयाल — 67
   *डॉ. निर्मला अग्रवाल*
8. हिन्दी साहित्य को दादू पंथ की देन — 84
   *डॉ. अमरेन्द्र त्रिपाठी*
9. आलोचकों की दृष्टि में संत जगजीवन दास — 94
   *डॉ. जितेन्द्र कुमार सिंह*
10. दादू की प्रासंगिकता — 106
    *डॉ. राजेश कुमार गर्ग*
11. जाग रे! सब रैन बिहाड़ी (संत कवि दादू दयाल का समाज चिंतन) — 111
    *डॉ. आनंद प्रकाश त्रिपाठी*
12. दादू के काव्य में मानव मूल्य — 126
    *डॉ. गीता कपिल*
13. संत दादू की भक्ति और काव्य संवेदना — 131
    *डॉ. विवेकानंद उपाध्याय*
14. संत कवि दादू के काव्य में भाषिक और शैल्पिक सौंदर्य — 138
    *डॉ. विवेक शंकर*
15. सामाजिक समरसता के प्रतीक दादू और उनका पंथ — 144
    *डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय*
16. समय की धुंध में खोई धुन : संत कवि वाजिद और उनकी कविता — 151
    *डॉ. नवीन नंदवाना*
17. दादू पंथ और संत रज्जब — 160
    *डॉ. सभापति मिश्र*
18. श्री दादूवाणी में आध्यात्मिक एवं सामाजिक समरसता — 178
    *डॉ. कामिनी ओझा*
19. भारतीय संस्कृति के सच्चे संवाहक दादू पंथ के अल्पख्यात संत 'वषना' — 187
    *डॉ. बृजेश कुमार पाण्डेय*
20. दादू साहित्य के प्रतिमान — 196
    *डॉ. अजीत कुमार पुरी*
21. दादू पंथ का मूल्यांकनःएक नई दृष्टि — 201
    *डॉ. विनम्र सेन सिंह*
22. संत काव्य के संत दादू दयाल और उनकी शिष्य परम्परा — 212
    *डॉ. सत्यप्रकाश पाल*
23. दादू दयाल के काव्य में लोक संस्कृति — 221
    *डॉ. दीपिका विजयवर्गीय*
24. दादू दयाल के साहित्य का मानवीय पक्ष — 227
    *डॉ. आशीष सिसोदिया*
25. संत रज्जब का साहित्य : व्यक्ति परिष्कार के द्वारा सामाजिक परिष्कार की साधना यात्रा — 234
    *डॉ. सुनीता रानी घोष*
26. संत को पहचानना कोई सरल, सहज कार्य नहीं — 244
    *डॉ. पुष्पा रानी*
27. दादू पंथ के सुधी समीक्षक प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय — 250
    *विभा पारीक*

28. संत दादू दयाल का लोक धर्म बजरिये उनकी कविता 257
*डॉ. शारदा द्विवेदी*
29. संत दादू दयाल के साहित्य में सामाजिक समरसता 263
*डॉ. उमेश चन्द्र*
30. संत कवि दादू दयाल और उनका जीवन दर्शन 271
*डॉ. सुनीता कुमारी गुप्ता*
31. दादू के काव्य में सामाजिक समरसता 277
*डॉ. मनीषा मिश्र*
32. संत दादू दयाल की वाणियों में संवेदना का सहज धरातल 282
*डॉ. आनदप्रकाश गुप्ता*
33. रज्जब वाणी में निहित जीवन मूल्य 287
*डॉ. विनिता चौहान*
34. भाई रे ऐसा पंथ हमारा–दादूदयाल के परिप्रेक्ष्य में 295
*डॉ. दमयन्ती तिवारी*
35. नैतिक आचरण के पैरोकार संत दादू दयाल 301
*डॉ. पियूष कुमार द्विवेदी*
36. संत दादू के दो अनमोल रत्नःबड़े सुन्दरदास एवं प्रहलाद दास 308
*डॉ दिव्या सिह राजपुरोहित*
37. संत दादूदयाल के साहित्य में सामाजिक चिंतन और विचार 315
*डॉ. योग्यता भार्गव*
38. संत काव्य और दादू पंथ 321
*डॉ. अखिलेश कुमार शंखधर*
39. सत दादू दयाल और उनकी शिष्य परम्परा 328
*डॉ. अलका मिश्र*
40. दादू दयाल के काव्य में निहित नैतिक भावना 335
*डॉ. बलजीत कुमार श्रीवास्तव*
41. वर्तमान समय और दादू दयाल की रचनाओं की सामाजिक पक्षधरता 340
*डॉ प्रिया ए*



42. दादू पंथ के शिखर संत 344
*डॉ. विजय मणि त्रिपाठी*
43. हिन्दी की संत काव्य परम्परा और संत दादू दयाल 352
*डॉ. मुकेश कुमार*
44. मानवीय संदर्भ के संत दादू दयाल 363
*डॉ. अजय बिहारी पाठक*
45. संत कवि दादू दयाल की लोक भाषा 366
*डॉ. कमलेश सिंह*
46. मानव कल्याण की पोषकःदादू दयाल की वाणी 370
*डॉ. अमित सिंह*
47. संत दादू दयाल की वाणी में सामाजिक चेतना का स्वरूप 379
*डॉ. दिनेश साहू*
48. दादू पंथी काव्य में व्यक्त ज्ञान का स्वरूप 387
*डॉ. परमप्रकाश राय*
49. दादू पंथी काव्य में धर्म व दर्शन 392
*डॉ. अजीत सिंह*

# समय की धुंध में खोई धुन : संत कवि वाजिद और उनकी कविता

• डॉ. नवीन नंदवाना

हिंदी साहित्य का पूर्व मध्यकाल अपनी साहित्यिक श्रेष्ठता और लोक से जुड़ाव के कारण अपनी विशेष पहचान रखता है। इस कालखंड में हिंदी के कई संत और भक्त कवियों ने भक्तिपरक लेखन के माध्यम से ईश्वर का गुणगान किया। साथ ही उन्होंने अपनी वाणियों के माध्यम से लोकजीवन के प्रति भी अपने दायित्व का निर्वहन किया। सहज लोकभाषा में इन संत–भक्तों ने एक ओर ईश्वर भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया वहीं दूसरी ओर तत्कालीन समाज के प्रति अपने दायित्व का भी भलीभाँति निर्वहन भी किया है। भक्ति पर विचार करते हुए हिंदी के विख्यात आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने प्रसिद्ध निबंध 'श्रद्धा–भक्ति' में लिखते हैं कि– "श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम ही भक्ति है। जब पूज्य भाव की वृद्धि के साथ श्रद्धा भाजन के सामीप्य लाभ की प्रवृत्ति हो, उसकी सत्ता के कई रूपों के साक्षात्कार की वासना हो, तब हृदय में भक्ति का प्रादुर्भाव समझना चाहिए।"[1] वहीं डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं कि– "भक्ति–काव्य हिंदी समाज की उदारतम चेतना का दस्तावेज है। कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा इस युग के श्रेष्ठ कवि हैं, यह मान्यता सर्व स्वीकृत है। इसका निहितार्थ है कि यहाँ हिंदू–मुसलमान, ब्राह्मण–दलित, पुरुष–स्त्री, समाज के सभी वर्गों का एक साझा रचना कर्म है, भले वे वर्ग सामान्य तौर पर समाज में अपना अलगाव बनाए रखते हों। ...भक्ति काव्य वस्तुतः हिंदी समाज की अनेक रूढ़ियों के बावजूद उसकी प्रबल जीवनी शक्ति का गतिशील और उज्ज्वल साक्ष्य है।"[2]

मध्यकालीन संत परंपरा भारतीय भक्ति साहित्य की अमर निधि है। संतों की वाणियों ने भक्ति के अमर स्वर के साथ देशदशा पर चिंता व्यक्त कर सुधार का मार्ग सुझाने का कार्य किया है। संत शब्द पर विचार करते हुए परशुराम चतुर्वेदी इस विषय में लिखते हैं कि– "'संत' शब्द का प्रयोग प्रायः बुद्धिमान ('सन्तः परीक्ष्यान्यतरद्भजन्ते मूढ : पर प्रत्ययनेय बुद्धिः'–कालिदास), पवित्रात्मा ('प्रायेण तीर्थाभिगमापदेशैः स्वयंहि तीर्थानि पुनन्ति सन्तः।' भागवत, स्कं.–1 अं. 19, श्लोक–8), सज्जन ('बंदों संत असज्जन चरणा। दुखप्रद उभय बीच कछु बरणा'–रामचरित मानस), परोपकारी ('सन्तः स्वयं परहिते विहिता भियोगाः'–भर्तृहरि) या सदाचारी ('आचारलक्षणां धर्मः, सन्तश्चाचारलक्षणाः।' महाभारत) व्यक्ति के लिए किया गया मिलता है, और कभी–कभी साधारण बोलचाल में इसे भक्त, साधु व महात्मा जैसे शब्दों का भी पर्याय समझ लिया जाता है। किंतु कुछ लोग इसे 'शांत' शब्द का रूपांतर होना ठहराते हैं और कहते हैं कि उस विचार से इसका अभिप्राय 'शं सुखं ब्रह्मानन्दात्मकं विद्यते अस्य के अनुसार 'ब्रह्मानंद सम्पन्न व्यक्ति' होना चाहिए। बौद्धों के पालिभाषा में लिखित प्रसिद्ध धर्मग्रंथ 'धम्मपद' में भी यह शब्द



कई स्थलों पर 'शांत' के अर्थ में ही प्रयुक्त दीख पड़ता है।"[3] संत कबीर ने संतों के लक्षण पर विचार करते हुए कहा है कि–

"निरबैरी निहकौंमता, साँई सेती नेह।
विषिया सूँ न्यारा रहे, संतहि का अँग एह।।"[4]

राजस्थान में भक्ति और समाज सुधार की अलख जगाने वाले संत कवियों में दादू पंथ के कवियों का विशेष स्थान है। संत दादूदयाल और इस पंथ के विविध संतों ने ईश्वर के निर्गुण–निराकार रूप की आराधना की। दादू ईश्वर में सच्ची आस्था रखते थे इसी कारण वे किसी सांसारिक धर्म और जाति को नहीं मानते थे। तभी तो वे कहते हैं कि–

"दादू कुल हमारे केशवा, सगा तो सिरजनहार।
जाति हमारी जगद्गुरु, परमेश्वर परिवार।।"[5]

अपनी यात्रा के दौरान जब दादूदयाल की महाराजा अकबर से भेंट होती है तब महाराज अकबर उनसे धर्म, दर्शन और अध्यात्म के विविध विषयों पर संवाद करते हैं। इसी संवाद के दौरान दादूदयाल से जब अकबर यह पूछ बैठते हैं कि खुदा की जाति, रंग और वजूद कैसा है ? इसके जवाब में दादूदयाल जो उत्तर देते हैं, वह संत मत को उद्घाटित करने वाला है। वे कहते है कि–

"(दादू) इसक अलह की जाति है, इसक अलह का अंग।
इसक अलह औजूद है, इसक अलह का रंग।।"[6]

इन्हीं महान संत दादूदयाल की शिष्य परंपरा में सुंदरदास, गरीबदास, रज्जब आदि के नाम बड़े आदर के साथ लिए जाते हैं। स्वामी दादूदयाल के 52 प्रमुख शिष्यों की (थांभायतियों) का वर्णन मिलता है। वहीं उनके शिष्यों की कुल संख्या 152 बताई जाती है। शेष 100 शिष्यों में अन्य शिष्यों के साथ वाजिद का नाम भी बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। पठान वंश में जन्मे वाजिद ने ईश्वर का स्मरण कई नामों के साथ किया है। "वाजिद ने अपने लघु काव्य 'गुन नाम माला' में कर्ता, करीम, अल्लाह, राम, निरंजन, अंतर्यामी, श्याम, दीनदयाल, जगदीश, रणछोड़, वनमाली, रघुनाथ, माधव, करुणामय, अविनाशी, मनमोहन, दामोदर, धरणीधर, गोविंद, जगन्नाथ, चतुर्भुज, नारायण, पुरुषोत्तम और मुरारी आदि अनेक नामों से संबोधित किया है। इन नामों के साथ उनके वैशिष्ट्य को दिखाते हुए, उनके स्मरण करने की अनिवार्यता को भी व्यक्त किया है। ये नाम कवि के व्यापक और उदार मनोवृत्ति के परिचायक हैं। वे उस निर्गुण ब्रह्म के संबोधन हैं, जिसकी व्याप्ति पूरे ब्रह्मांड में है। वह घट–घट वासी है। वह सबमें सब उसमें हैं। उन्होंने उस ब्रह्म के साथ गुरु, पिता, माता, स्वामी, मित्र व पति के रूप में संबंध जोड़ा है।"[7] ये वाजिद भी ईश्वर का निर्गुण निराकार मानते हुए कहते हैं कि उस ईश्वर के कई नाम हैं किंतु उनकी कोई जाति–पाँति और कुल–वर्ण आदि नहीं है–

"बाजीद जाति पाँति कुल बरन बिन, स्याम पीत नहीं सेत।
पर न कोऊ पावई, निगम कहत तिहि नेत।"[8]



256

वाजिद के विषय में यह कहा जाता है कि ये पठान वंश के थे और इनका संबंध राजवंश से था। ये नवाब थे। वाजिद के विषय में यह जनश्रुति है कि किसी गर्भिणी हरिणी का शिकार करते वक्त इनका मन परिवर्तित हुआ। अहिंसा के भाव जगे और ये दादू के शिष्य बन गए। "वाजिद जी पठान थे। अपनी युवावस्था में इन्होंने एक गर्भिणी हरिणी की हत्या कर दी जिसका इन्हें बहुत पश्चाताप हुआ और ये जाकर दादूदयाल के शिष्य हो गए। इनके पन्द्रह ग्रंथ बतलाए जाते हैं, परंतु विशेष रूप से ये अपने अरिल्लों के लिए प्रसिद्ध हैं।"[9] स्वामी राघवदास जी रचित 'भक्तमाल' में उल्लेख मिलता है कि–

"छाड के पठाण कुल राम नाम कीन्हो पाठ,
भजन प्रताप तैं बाजींद बाजी जीत्यो है।
हिरणी हतत उर डर भयो भय कर,
शील भाव उपज्यो दुशील भाव बीत्यो है।
तोड़े है कमान तीर चानक दियो शरीर,
अविगत आगम सु अन्तर उदीत्यो है।
राघो रति रात दिन देह दिल मालिक से,
खेल्यो जैसे रामजी से खेल कीरीत्यो है।"[10]

संतों के साहित्य का प्रधान तत्त्व ईश्वर की आराधना रहा है। वे अपनी वाणियों के माध्यम से ईश्वर का गुणगान किया करते थे। सच्चा साधक अपने को ईश्वर के भरोसे छोड़ देता है। वे ईश्वर को प्रधान तत्त्व मानते हैं और मानते हैं कि ईश्वर और गुरु के भरोसे ही साधक संसार से पार उतर सकता है। वाजिद भी कहते हैं कि परमात्मा का मेरे पर आशीर्वाद है और गुरु मेरे हृदय में निवासरत है इसलिए मैं अपना सर्वस्व इन्हीं के भरोसे छोड़कर निशंक हूँ। अपने अरिल्ल में वाजिद लिखते हैं कि–

"जीव जगत में रल्या पड़या भौ धार रे।
खबर न जानी सार लह्या नहिं पार रे।।
मुरसिद के परता लिया भौ छेहरा।
भरम मिटाया दूर देह में देहरा।।"[11]

यहाँ वाजिद स्पष्ट रूप से कहते हैं कि मेरा मन तो सांसारिक विषय–वासनाओं की ओर दौड़ रहा था किंतु गुरुकृपा के बल पर ही मैं इस भवसागर से पार हो पाया। ईश्वर की प्राप्ति और जन्म–मरण के बंधन से छुटकारा पाने में वाजिद गुरु की महिमा को प्रमुखता देते हैं। वाजिद का मत है कि इस संसार में रहकर मनुष्य कितने ही वेद, पुराण आदि पढ़ ले किंतु वह गुरु कृपा के बिना इन ग्रंथों में निहित मर्म को नहीं समझ सकता है। गुरु की कृपा के बिना मुनष्य कितने ही शास्त्रों का अध्ययन कर ले किंतु शाश्वत सत्य का ज्ञान और जन्म–मरण के चक्र से छुटकारा पाने के लिए गुरु कृपा अनिवार्य है। वाजिद कहते



हैं कि–

"पढ़िहैं वेद पुराण कुराण बखान हो।
सतगुरु की बिन महर ज्ञान की सुधि नहीं।।
अनँत सिद्ध अरु साध और बहु लोय रे।
हरिहाँ, सतगुरु की बिन दया प्रलै जिव होय रे।।"[12]

संत ईश्वर के नाम स्मरण को प्रमुखता देते हैं। संत कबीर ने भी अपनी साखियों में राम नाम की महत्ता को स्वीकारा है। नाम स्मरण संत काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों में से है। राम के चरणों में समर्पित होते हुए दादूदयाल तो कहते हैं कि–

"दादू कहतां सुनतां राम कहि, लेतां देतां राम।
षातां पीतां राम कहि, आतम कवल विश्राम।।"[13]

वहीं वाजिद भी नाम स्मरण की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि हमें समस्त सांसारिक बातों को त्यागते हुए ईश्वर के नाम का स्मरण करना चाहिए। वह ही एकमात्र सत्ता है जो पल भर में ही मुक्ति प्रदान करने की सामर्थ्य रखती है। इसी नामस्मरण के बल पर साधक भवसागर के बंधनों से मुक्ति पा सकता है। उनका कहना है कि साधक को हाथ में सुमरणी रखते हुए सत्संगति करनी चाहिए और अपना अधिकतम समय हरिनाम स्मरण में बिताना चाहिए। वे नाम स्मरण की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि–

"जनम जात है बाद याद कर पीव को।
मुसकिल सब आसान होयगी जीव को।
जाके हिरदै राम रैन दिन रहत है।
हरिहाँ, मुक्ति माँझ नहिं फेर साध सब कहत है।"[14]

नाम की महत्ता का बखान करते हुए वाजिद बताते हैं कि –

"अर्ध नाँव पाषाण तिरे हैं लोय रे।
राम कहत कलि माहिं न बूड़ै रे।
कर्म कितीयक बात बिलै हो जायेंगे।
हरिहाँ हाथी के अवसर न कूकर खायेंगे।।"[15]

वाजिद रामनाम को एक आश्चर्यमयी ढाल मानते हैं और कहते हैं कि अन्य देवता भी इसी राम नाम रूपी ढाल का सहारा लेते हैं। अतः जो मुनष्य इस नाम का सहारा लेता है उसका मृत्यु का भय टल जाता है। वे अष्टांगादि योग, अश्वमेधादि यज्ञ और सकाम जप और पंचाग्नि रूप तप आदि को केवल राम नाम के सहारे प्राप्त कर सकते हैं।

विरह का भाव भी संतों के यहाँ विद्यमान है। सभी संतों की आत्मा, परमात्मा के विरह में व्याकुल रहती है। वाजिद भी इसी विरह भाव को इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं–

"सूर कँवल बाजिदन सुपने मेल है।



257

जरै दिवस अरु रैन कड़ाई तेल है।
अपनौं ही सब खोट दोष नहिं स्याम को।
हरिहाँ, नीच ऊँच सौं बँध्यौ कहौ किहि काम को।।"[16]

संतों की आत्मा, परमात्मा के विरह में सदैव व्याकुल रहती है। उन्होंने सांसारिक उपमानों यथा–'काली रात का काली सर्पिणी जैसा लगना', 'प्रियतम का मुँह मोड़ना' आदि प्रयोगों के माध्यम से अपने विरह को व्यंजित किया है। वाजिद ने परंपरागत उपमानों के सहारे भी परमात्मा के प्रति अपने विरह का गान किया है। वे कहते हैं कि एक ओर तो काली रात्रि, दूसरी ओर बिजली चमक रही है, ऐसे माहौल मे जो मुझे प्रिय से मिलवा दे, मै उसी के बलिहारी जाऊँगी। चातक के उपमान के सहारे भी वाजिद ने अपने विरह का करुण गान किया है। प्रिय के विरह में जोगिन बनना, उन्मनी मुद्रा धारण करना, पथिक के सहारे अपने प्रिय को संदेश भिजवाना जैसे प्रयोग भी वाजिद के यहाँ सहज रूप से द्रष्टव्य होते हैं।

संतों ने अपने काव्य के माध्यम से संसार की असारता का भी बोध कराया है। संतों की दृष्टि में यह संसार 'कागज की पुड़िया' के समान है जो बूँद पड़ते ही गल जाता है। अन्य संतों की भाँति वाजिद ने भी काल के प्रभाव के साथ संसार की नश्वरता का वर्णन किया है।

"आव बँधी बाजीद एक ही बाल सों।
रुधिर माँस अरु हाड़ लपेटे खाल सों।।
चुपरै तेल फुलैल काय यह चाम की।
हरिहाँ, देह खेह ह्वै जाय दुहाई राम की।।"[17]

इसके माध्यम से वाजिद ने आयु की क्षणिकता को दर्शाया है। वे कहते हैं कि रक्त, माँस और हड्डियाँ आदि चमडी से आवृत्त होते हैं किंतु संसारी मनुष्य इसी चर्म पर इत्र और तेल आदि की मालिश कर अपने को सुंदर बनाने का प्रयास करता रहता है किंतु वास्तविक सौंदर्य बाहरी सौंदर्य में नहीं बल्कि अंतर की सुंदरता में है। यम के न्याय आदि की चर्चा करते हुए वाजिद संसार की असारता का वर्णन करते हैं। उनकी दृष्टि में माता–पिता, बंधु–भ्राता आदि सभी सांसारिक रिश्ते–नाते सभी उसी काल से बंधे हैं तभी तो वाजिद राम नाम की महत्ता का उद्घाटन इस प्रकार करते हैं–

"परै काल के जाल जीव किहि काम को।
तज के माया मोह रटै किनि राम को।।
मोटो मुद्गर हाथ साथ जमदूत है।
हरिहाँ, तात मात बँध भ्रात कौंन के पूत है।।"[18]

सत सदैव सदाचरण के पक्षधर रहे हैं। वे मनुष्य को सदाचारी होने की सीख देते हैं। वाजिद स्वर्ण और सुंदरी से बचकर रहने का संदेश देते हैं। संतों की दृष्टि में ये दोनों परमात्मा से विमुख करने वाली चीजें हैं। संत इसी प्रकार दान–पुण्य



की महत्ता को भी स्वीकारते हैं। सहज और सूक्ष्म साधना पर बल देने वाले वाजिद कमल के सूखने के माध्यम से ईश्वर से जुड़ने का संदेश देते हैं–

"सायर सूक्यौ जबहि केवल कुमिलाइगौ।
हंस बटाऊ बीर तुरत उड़ जाहिंगे।।
साहिब अपनौं सुमिरि बिलम क्यौ कीजिए।
परि हौं मिहदी होइ पिसाइ कंत के कारनै मीत कोटि जो जीजिये।।"[19]

संत बताते हैं कि दुष्ट व्यक्ति कभी भी अपनी दुष्टता नहीं त्यागता है। दादूदयाल इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए अन्य कई उदाहरणों का सहारा लेते हैं। वे कहते हैं कि –

"कोटि बरस लौ राखिये, बंसा चंदन पास।
दादू गुण लिये रहै, कदे न लागै बास।।"[20]

इसी प्रकार वाजिद भी लिखते हैं कि–

"पाहन कोरौ रह्यौ बरसता मेह में।
घाल धरी बाजीद दुष्टता देह में।।
डसै औचके आय मूँड गहि रोइये।
हरिहाँ, सर्पही दूध पिवायवृथाही खोइये।।"[21]

वाजिद दुर्जन व्यक्ति की तुलना नीम के बीज से करते हैं। उनके अनुसार दुष्ट व्यक्ति उसी प्रकार अपना स्वभाव नहीं बदलता है जिस प्रकार नीम के बीज को कितना ही शक्कर से घोलकर दूध आदि से सींचने पर भी उसकी कड़वाहट खत्म नहीं होती है। वैसे ही दुष्ट कभी भी अपनी दुष्टता नहीं त्यागता है।

वाजिद ने दया और अहिंसा से जुड़े पदों की भी रचना की है। अन्य संतों की भाँति वाजिद दया और अहिंसा का संदेश देते हैं। वे माया अर्थात् धन को प्रभु कार्य और दान आदि में खर्च करने का कहते हैं। सगुण और निर्गुण के भेद को मिटाने का भी संतों ने संदेश दिया है। वाजिद कहते हैं कि–

"वे हरि मथुरा मांही वै ही द्वारिका।
पूरा रह्या भर पूर प्रेम की पारिखा।
राख्यो है प्रहलाद क मार्‌यौ बाप रे।
परि हौं बाजीद तू मत जाणै और निरंजन आप रे।।"[22]

वाजिद संत की तुलना हरिजन अर्थात् ईश्वर के जन से करते हुए कहते हैं कि संतों को सांसारिक लोभ और लालच आदि से बचकर रहना चाहिए। उसका व्यक्तित्व शेर की भाँति निर्भिक होना चाहिए–

"बाजीदा लालच लोभ न मोह मन, ऐ कलि मल अबीह।
हरिजन अैसा चाहिए, जैसा बन का सींह।।"[23]

संतों का उद्देश्य अपनी कविता के माध्यम से ईश्वर का गुणगान करना रहा

है। वे कविता के सौंदर्य और चमत्कार आदि के फेर में नहीं पड़े फिर भी उनकी कविता के कला पक्ष का मूल्यांकन करने पर हम देखते हैं कि भक्ति के मार्ग पर बढ़ी उनकी कविता में छंद और अलंकार आदि का सुंदर नियोजन दिखाई पड़ता है। भाषा की सहजता और सर्व ग्राह्यता उनके साहित्य की अपनी विशेषता है। वाजिद का सर्वाधिक प्रिय छंद अरिल्ल रहा है। अब तक प्राप्त अरिल्लों की संख्या 192 है। संस्कृत साहित्य में प्लवंगम नाम से प्रसिद्ध इस मात्रिक सम छंद में 21 मात्राएँ होती हैं तथा आदि व अंत में गुरु होना अनिवार्य माना जाता है।

वाजिद ने कुंडलियों की भी रचना की है। वहीं संतों के यहाँ प्रचलित प्रिय छद साखी का प्रयोग भी वाजिद के यहाँ पर्याप्त रूप से हुआ है। वाजिद की कुल 173 साखियाँ उपलब्ध होती हैं जिसके माध्यम से संत वाजिद ने ईश्वर भक्ति, गुरु महिमा, भक्ति, विरह, नैतिक मूल्यों को अभिव्यक्ति दी है। पद शैली का प्रयोग करते हुए वाजिद ने लगभग 63 पदों की रचना की हैं। ये पद प्रायः किसी राग रागिनियों में निबद्ध हैं।

अलंकारों के प्रयोग के प्रति संत अधिक सचेष्ट नहीं रहे क्योंकि उनकी कविता का उद्देश्य अन्य सांसारिक कवियों की भाँति चमत्कार प्रदर्शन या यश प्राप्ति नहीं रहा। इसी कारण अलंकार उनकी कविता में सहज समाहित होकर काव्य का सौंदर्य बढ़ाते हैं। 'कायर कूर बहु कुटिल कामी' जैसी पंक्तियों में अनुप्रास की सुंदर छटा दिखती है तो 'परदेशी की प्रीति फूस का तापणा' में उपमा द्रष्टव्य होता है। इसी प्रकार उनके यहाँ उत्प्रेक्षा, दृष्टांत और रूपक आदि अलंकारों की योजना भी दिखाई पड़ती है।

संत लोक जीवन की सहज भाषा को अपने काव्य के लिए अपनाते थे इसी कारण उनकी कविता जनमन से सीधी जुड़ती थी। वाजिद की कविता में भी दुरगति, धणी, कपरा, अगनि और पीव जैसे लोक जीवन में बहुप्रचलित शब्दों का प्रयोग मिलता है।

अंत में कहा जा सकता है कि दादू पंथ की परंपरा में जितनी चर्चा संत दादूदयाल, सुंदरदास और रज्जब आदि की होती है उसी अनुरूप अन्य संतों के जीवन और लेखन को भी उद्घाटित करने की आवश्यकता है। वास्तव में वाजिद ने संत परंपरा को अपनाकर उसी के अनुरूप लेखन किया। दादू पंथ के रचनाकारों में उनका नाम लिया जाता है पर उनके साहित्य पर आज भी उतनी चर्चा और शोध आदि नहीं होता जितना की अपेक्षित है। इनके साहित्य पर शोध और अध्ययन की आवश्यकता है। इसी के माध्यम से समय की धुंध में खोये इस संत कवि के व्यक्तित्व और रचनाकर्म की धुन को विशेष पहचान दी जा सकती है।

## संदर्भ सूची


1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल : चिंतामणि, भाग–1, हिंदी साहित्य सरोवर, आगरा, 2002, पृष्ठ 20
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी : भक्ति काव्य–यात्रा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2003, पृष्ठ 09
3. परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा, भारती भंडार, प्रयाग, सं. 2008, पृष्ठ 3
4. डॉ. श्यामसुंदर दास : सं. कबीर ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं. 2059, पृष्ठ 39
5. स्वामी नारायण दास : टीकाकार, श्री दादूवाणी, श्रीदादू दयालु महासभा, जयपुर, नवम संस्करण, पृष्ठ 183
6. दादूदयाल की बानी : भाग–1, विरह को अंग, 3/152, वेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद, 2009, पृष्ठ 43
7. गोविंद रजनीश : सं. वाजिद रचनावली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, भूमिका, पृष्ठ 5
8. गोविंद रजनीश : सं. वाजिद रचनावली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 213
9. परशुराम चतुर्वेदी : हिन्दी साहित्य का वृहत्त इतिहास चतुर्थ भाग, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं. 2025, पृष्ठ 204
10. स्वामी राघवदास : भक्तमाल, संत बाबा रामपाल दास सेवा संस्थान, निवाई, टोंक, 2010, पृष्ठ 644
11. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 72
12. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 74
13. परशुराम चतुर्वेदी : सं. दादूदयाल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं. 2023, पृष्ठ 22
14. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 74
15. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 78
16. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 84
17. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 94
18. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 95
19. गोविंद रजनीश : सं. वाजिद रचनावली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 56

20 दादूदयाल की बानी : भाग–1, वेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद, 2009, पृष्ठ 237
21. ब्रजेंद्र कुमार सिंहल : सं. संत बाजीद–ग्रंथावली, भाग–1, धारिका पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2007, पृष्ठ 99
22. गोविंद रजनीश : सं. वाजिद रचनावली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 77
23. गोविंद रजनीश : सं. वाजिद रचनावली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 155

सह आचार्य, हिंदी विभाग
नोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
(राजस्थान) 313001
संपर्क : 09828351618, 09462751618
nandwana.nk@gmail.com